आपने लिखा

शैक्षणिक संदर्भ अंक 91, मार्च-अप्रैल 2014 का महत्वपूर्ण अंक बेहद पठनीय है। इस अंक में भाषा विज्ञान पर आधारित रमाकान्त अग्निहोत्री का आलेख 'बल, चल, हल...' पढ़ने के बाद लगा कि भाषा की व्यापकता एवं अन्तरंगता में बहुत-सी बातें अन्तर्निहित हैं। इस आलेख के माध्यम से वचन को लेकर जिस तरह का व्यवहार बताया गया है, इस पर हर किसी को गौर करना चाहिए। जिन 30 सवालों को बेहतर तरीके से बताने का प्रयास किया गया है उसके लिए वे बधाई के पात्र हैं।

इसी अंक में श्रीदेवी जी द्वारा लिखित आलेख 'पतियोगिता और प्रतियोगिता' बच्चों के सीखने के चरण दर्शाता है कि आखिर भाषा शिक्षण के समय किन-किन बातों पर गौर करना ज़रूरी है। 'र' के समग्र रूप का समाधान वाकई कई प्रचलित उदाहरणों के माध्यम से ही बेहतर तरीके से समझाया जा सकता है। कई शिक्षक साथी अपने स्तर पर बेहतर प्रयास करके बच्चों की भाषाई दक्षता को काफी आगे बढ़ा रहे हैं। ऐसे रुचिकर शिक्षकों का अग्रिम पंक्ति में सम्मान करना होगा ताकि सृजनात्मकता एवं रचना-धर्मियों की संख्या में वृद्धि हो सके। इस दिशा में श्रीदेवी जी का प्रयास एवं कनहारपुरी गाँव की शिक्षिका की तारीफ करनी होगी जो इस कार्य को अंजाम दे रही हैं।

'शिक्षा का उद्देश्य - शहरी वंचित समुदाय के सन्दर्भ में' शिवानी तनेजा का आलेख देश की सबसे बड़ी सच्चाई को उजागर करता हुआ भागीरथ प्रयास है। वाकई शिवानी जी, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 के मूल बिन्दु शिक्षा के व्यापक स्वरूप पर गौर करें तो पाठ्यक्रमों का स्वरूप, बोझिल पाठ्य, देश-दुनिया का इतिहास सच्चाई से कोसों दूर, अपनी ज़मीनी हकीकत के इतिहास से कहीं दूर ही नज़र आता है। शिक्षा, समाज की व्यापकता में कुछ हद तक मार्गदर्शन का काम करती है। अगर इस आलेख को भी आधार मान कर चलते हैं तो कई जगह उल्लेखित है कि शिक्षा कितनी उपयोगी है। साक्षरता के लिए शिक्षा का होना अतिआवश्यक है। जीवन के हर पल में चाहे वह बैंक, कचहरी, बस, पान की दुकान, रेल गाड़ी, मज़दूरी का पैसा, सिलाई, कबाड़ी, बच्चों की पढ़ाई के लिए निर्णय, समाज में बातचीत, भय को मिटाने के लिए, व्यवहार में बदलाव के लिए, त्वरित निर्णय लेने के लिए, तर्क लगाने के लिए, अन्तर महसूस करने के लिए, लैंगिक असमानता दूर करने के लिए, समानता का भाव लाने के लिए, असमानता का भेद मिटाने के लिए आदि में सभी जगह शिक्षा बहुपयोगी है। मेरा खुद का अनुभव है कि समाज में उन लोगों का महत्व अधिक है जो अधिक पढ़े-लिखे हैं, जो अधिक तर्क एवं न्याय संगत बात कर सकते हैं।

अगर समाज की व्यावहारिक दिक्कतों पर गौर करें तो भी परिवार को खाने, पहनने एवं रहने की मूल दिक्कत के अलावा शिक्षा पाना भी आज मूल समस्याओं में से एक है। पर साथ ही समाज में कुछ ऐसे लोग भी हैं जो शिक्षा की कठिन डगर को

सरलतम कार्यरूप देने में लगे हुए हैं।

'संदर्भ' के इस अंक के लिए सम्पादक, सहायक सम्पादक एवं सम्पादकीय सहयोग टीम बधाई के पात्र हैं।

नरेन्द्र साहू,
अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, धमतरी, छत्तीसगढ़

शैक्षणिक संदर्भ अंक 90 सही समय पर भिजवाने के लिए धन्यवाद।

सुशील जोशी का पहला ही आलेख 'तथ्यों की एक्सपायरी तारीख' शिक्षकों के लिए एक मार्गदर्शक लेख है।

ख्यातनाम शिक्षाविद् कृष्ण कुमार के साथ दिशा नवानी की बातचीत बहुत ज्ञानवर्धक लगी। यह एक कटु सत्य है कि हमारी वर्तमान शिक्षा-व्यवस्था पाठ्यपुस्तकों पर बहुत अधिक निर्भर है और इसके बाद भी, पुस्तकों का स्तर प्रायः न तो बच्चों के अनुकूल है, न शिक्षकों के। पुस्तक लेखन में भी तथाकथित शिक्षाविदों की ही चलती है जो किसी-न-किसी पूर्वाग्रह को लेकर पुस्तक लिखवाना चाहते हैं।

राजस्थान में गत सत्र (2013-14) से कक्षा एक से पाँच तक नई पाठ्यपुस्तकें लागू की गई हैं, जिनमें एकलव्य का भी कुछ योगदान रहा है, परन्तु इन पुस्तकों को पढ़ने-पढ़ाने के लिए जिस आदर्श व्यवस्था की ज़रूरत है वह यहाँ अभी कोसों दूर है। अभी तक शिक्षकों की भी समझ में नहीं आया है कि इन पुस्तकों का क्या करें, विशेषकर अँग्रेज़ी की पुस्तकों का स्तर अत्यन्त जटिल और अस्पष्ट है।

जिस राज्य में अभी तक शिक्षक प्रशिक्षण ही शायद स्वंतत्रता-पूर्व का चल रहा है वहाँ इन नवाचारों को समझाना और लागू करना टेढ़ी खीर है। पहली व तीसरी की अँग्रेज़ी की किताबों में ऐसे-ऐसे कठिन शब्द हैं जिनको पढ़ने के लिए शब्दकोष का सहारा लेना ज़रूरी हो जाता है।

प्रो. कृष्ण कुमार ने पाठ्यपुस्तक को लेकर जो अपने विचार बताए हैं, मैं उनका समर्थन करता हूँ। प्राथमिक कक्षाओं में तो दरअसल पाठ्यपुस्तकें होनी ही नहीं चाहिए। वरन् यह कार्य शिक्षकों को ही सौंप देना चाहिए कि वे अपने विद्यालय के लिए खुद ही एक पाठ्यक्रम और पाठ्यचर्या निर्धारित करें। सरकार को बस ज़्यादा-से-ज़्यादा ऐसा करने के लिए कुछ प्रशिक्षण और दिशा-निर्देश उपलब्ध करवा देने चाहिए।

'स्थूल अर्थशास्त्र' में अमित भादुड़ी जी ने इस नीरस विषय की कई सरस बातें बताईं, साथ ही इसके कई रहस्य भी प्रकट किए। अर्थशास्त्र की कठिन शब्दावली हमारे राजनेताओं के लिए सीधी-साधी जनता को बहकाने के लिए अच्छा हथियार है।

रमेश जांगिड़, शिक्षक
हनुमानगढ़, राजस्थान

शैक्षणिक संदर्भ अंक 90 में सुशील जोशी का आलेख 'तथ्यों की एक्सपायरी तारीख' बहुत अच्छा लगा। ऐसे लेख विज्ञान की सही चेतना को फैलाने में मदद करते हैं। उतना ही अच्छा है सुशील शुक्ला का लेख 'साहित्य और पढ़ना सीखना के इर्द-गिर्द कुछ बातें' और दिशा नवानी की कृष्ण कुमार जी के साथ बातचीत।

प्रेमपाल शर्मा,
नई दिल्ली